आखर हिंदी पत्रिका; e-ISSN-2583-0597 खंड 6/अंक 1/मार्च 2026

Received: 15/03/2026; Revised: 18/03/2026; Accepted: 24/03/2026; Published: 28/03/2026

आधुनिक हिन्दी कविता में आर्थिक चेतना : मार्क्स, एंगेल्स और एडम स्मिथ के आर्थिक सिद्धांतों के आलोक में

Dr.Jisha M.N.

Assistant Professor, Department of Hindi

Mar Athanasius College (Autonomous)

Kothamangalam

Ernakulam, Kerala

Mob.no9496826235

Email:jishamn@macollege.in

Dr.Jisha M.N., आधुनिक हिन्दी कविता में आर्थिक चेतना: मार्क्स, एंगेल्स और एडम स्मिथ के आर्थिक सिद्धांतों के आलोक में, आखर हिंदी पत्रिका, **खंड 6/अंक 1/मार्च 2026**,(68 -74)

https://doi.org/10.5281/zenodo.19499517

This work is licensed under CC BY-NC 4.0

सार :

आधुनिक हिन्दी कविता में आर्थिक चेतना सामाजिक यथार्थ की एक महत्त्वपूर्ण अभिव्यक्ति के रूप में उभरती है। औपनिवेशिक शोषण, औद्योगिकीकरण, पूँजीवादी अर्थव्यवस्था और वैश्विक आर्थिक परिवर्तनों ने भारतीय समाज में वर्गीय असमानताओं को तीव्र किया है। इन परिस्थितियों ने साहित्य, विशेषकर कविता, को गहराई से प्रभावित किया। आधुनिक हिन्दी कवियों ने किसान, मजदूर, निम्नवर्ग और हाशिये के समाज की आर्थिक पीड़ा तथा संघर्ष को अपनी रचनाओं में प्रमुखता से व्यक्त किया है। प्रस्तुत शोध-लेख में आधुनिक हिन्दी कविता में निहित आर्थिक चेतना का विश्लेषण प्रमुख आर्थिक विचारकों—कार्ल मार्क्स, फ्रेडरिक एंगेल्स और एडम स्मिथ—के आर्थिक सिद्धांतों के आधार पर किया गया है। मार्क्स और

एंगेल्स के वर्ग-संघर्ष तथा श्रम-मूल्य के सिद्धांत साहित्य में आर्थिक शोषण और प्रतिरोध की संरचना को समझने के लिए महत्त्वपूर्ण सैद्धांतिक आधार प्रदान करते हैं। दूसरी ओर, एडम स्मिथ का मुक्त बाजार, श्रम-विभाजन और आर्थिक स्वतंत्रता का सिद्धांत आर्थिक संरचना की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को स्पष्ट करता है। इस अध्ययन में नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, त्रिलोचन और दुष्यंत कुमार की कविताओं के उदाहरणों के माध्यम से आर्थिक यथार्थ, श्रम-संघर्ष और वर्गीय चेतना की अभिव्यक्ति का आलोचनात्मक विश्लेषण किया गया है। शोध से यह निष्कर्ष निकलता है कि आधुनिक हिन्दी कविता केवल सौंदर्यात्मक अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं है, बल्कि वह आर्थिक विषमता और सामाजिक अन्याय के विरुद्ध एक वैचारिक प्रतिरोध भी प्रस्तुत करती है।

कुंजी शब्द: आर्थिक चेतना, आधुनिक हिन्दी कविता, वर्ग-संघर्ष, श्रम, पूँजीवाद, सामाजिक यथार्थ

प्रस्तावना

आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिवर्तनों के साथ गहरे रूप से जुड़ा हुआ है। औपनिवेशिक शासन, औद्योगिकीकरण तथा पूँजीवादी आर्थिक व्यवस्था ने भारतीय समाज में व्यापक सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन उत्पन्न किए। इन परिवर्तनों ने साहित्यिक अभिव्यक्ति को भी गहराई से प्रभावित किया। कविता, जो परंपरागत रूप से भावनात्मक और सौंदर्यपरक अभिव्यक्ति का माध्यम मानी जाती थी, आधुनिक काल में सामाजिक यथार्थ और आर्थिक संघर्ष की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बन गई। विशेष रूप से प्रगतिवादी काव्यधारा ने साहित्य को सामाजिक परिवर्तन का उपकरण माना और आर्थिक विषमता, वर्ग-संघर्ष तथा श्रम-शोषण को अपनी रचनाओं में प्रमुख स्थान दिया।[1]

आधुनिक हिन्दी कविता में आर्थिक चेतना को समझने के लिए आर्थिक सिद्धांतों की पृष्ठभूमि अत्यंत आवश्यक है। इस संदर्भ में कार्ल मार्क्स, फ्रेडरिक एंगेल्स और एडम स्मिथ के विचार महत्वपूर्ण सैद्धांतिक आधार प्रदान करते हैं। मार्क्स और एंगेल्स ने आर्थिक संरचना को सामाजिक संबंधों और सत्ता-संतुलन की मूल आधारशिला माना, जबकि एडम स्मिथ ने मुक्त बाजार और श्रम-विभाजन के माध्यम से आर्थिक विकास की अवधारणा प्रस्तुत की। इन सिद्धांतों के आलोक में आधुनिक हिन्दी कविता का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि साहित्य समाज की आर्थिक संरचनाओं से गहरे रूप से प्रभावित होता है तथा उनके प्रति आलोचनात्मक दृष्टि विकसित करता है।

1. सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य

(क) मार्क्स और एंगेल्स का आर्थिक दृष्टिकोण

कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एंगेल्स के अनुसार समाज की संरचना मुख्यतः आर्थिक आधार पर निर्मित होती है। उनके मत में उत्पादन के साधनों पर नियंत्रण रखने वाला वर्ग सत्ता और संसाधनों पर प्रभुत्व स्थापित कर लेता है, जबकि श्रमिक वर्ग शोषण का शिकार बनता है।[2]

मार्क्स के अधिशेष मूल्य (Surplus Value) सिद्धांत के अनुसार श्रमिक अपने श्रम से जितना मूल्य उत्पन्न करता है, उसका पूर्ण प्रतिफल उसे प्राप्त नहीं होता। उत्पादन प्रक्रिया में उत्पन्न अतिरिक्त मूल्य को

पूँजीपति लाभ के रूप में अपने पास रख लेता है, जिससे पूँजीवादी व्यवस्था में आर्थिक असमानता और वर्ग-संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती है।[3]

यह सिद्धांत आधुनिक हिन्दी कविता में आर्थिक विषमता और वर्गीय संघर्ष की अभिव्यक्ति को समझने में अत्यंत उपयोगी सिद्ध होता है। प्रगतिवादी कवियों ने श्रमिक वर्ग की पीड़ा, भूख, बेरोज़गारी और सामाजिक असमानता को चित्रित करते हुए पूँजीवादी व्यवस्था की आलोचना की है।

(ख) एडम स्मिथ का आर्थिक दृष्टिकोण

एडम स्मिथ को आधुनिक अर्थशास्त्र का जनक माना जाता है। उनकी प्रसिद्ध कृति *The Wealth of Nations* (1776) में उन्होंने मुक्त बाजार और श्रम-विभाजन की अवधारणा प्रस्तुत की। स्मिथ के अनुसार श्रम-विभाजन उत्पादन क्षमता को बढ़ाता है और आर्थिक विकास को गति देता है।[4]

उन्होंने 'अदृश्य हाथ' (Invisible Hand) का सिद्धांत प्रस्तुत करते हुए यह तर्क दिया कि व्यक्ति अपने स्वार्थ की पूर्ति करते हुए भी अनजाने में समाज के समग्र हित में योगदान देता है। यद्यपि व्यवहारिक स्तर पर यह व्यवस्था कई बार सामाजिक असमानताओं को जन्म देती है। आधुनिक हिन्दी कविता में कई कवियों ने बाजार-व्यवस्था की इसी विडंबना को उजागर किया है।

2. आधुनिक हिन्दी कविता में आर्थिक चेतना

हिन्दी साहित्य में प्रगतिवाद बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक में उभरने वाली एक महत्वपूर्ण साहित्यिक धारा है, जिसने साहित्य को सामाजिक यथार्थ और आर्थिक विषमता से जोड़ने का कार्य किया। 1936 में प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना के साथ हिन्दी कविता में वर्ग-संघर्ष, श्रमिक जीवन, किसान-पीड़ा और पूँजीवादी शोषण जैसे विषय केंद्र में आए। आधुनिक हिन्दी कविता में आर्थिक चेतना विशेष रूप से प्रगतिवादी आंदोलन के बाद स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।[5]

इस आंदोलन के कवियों ने समाज के शोषित और वंचित वर्गों की आवाज़ को साहित्य में स्थान दिया। आर्थिक चेतना का संबंध केवल आर्थिक समस्याओं से नहीं है, बल्कि यह सामाजिक न्याय, समानता और मानवाधिकार जैसे व्यापक प्रश्नों से भी जुड़ा हुआ है।

3. प्रमुख कवियों की कविताओं में आर्थिक यथार्थ

(1) नागार्जुन की कविताओं में आर्थिक शोषण

नागार्जुन की कविताओं में आर्थिक शोषण का चित्रण भारतीय ग्रामीण जीवन की कठोर वास्तविकताओं को उजागर करने वाला एक महत्त्वपूर्ण आयाम है। स्वतंत्रता के बाद के दशकों में जब आर्थिक विषमता और बेरोज़गारी व्यापक रूप से विद्यमान थीं, नागार्जुन ने अपनी रचनाओं के माध्यम से किसान और मजदूर वर्ग के जीवन-संघर्ष को मार्मिक ढंग से अभिव्यक्त किया।

उनकी कविता *"खाली नहीं और खाली"* में वे लिखते हैं—

"खाली नहीं मकान, खाली नहीं दूकान...

खाली है हाथ, खाली है पेट, खाली है थाली, खाली है प्लेट।"[6]

इन पंक्तियों में श्रमिक जीवन की विडम्बना को उकेरा गया है, जहाँ संसाधनों की प्रचुरता के बावजूद श्रमिक वर्ग अभावग्रस्त बना रहता है। यह स्थिति मार्क्स के अधिशेष मूल्य सिद्धांत की प्रतिध्वनि प्रतीत होती है।

इसी प्रकार *"अकाल और उसके बाद"*कविता में ग्रामीण जीवन की त्रासदी को अत्यंत मार्मिक बिंबों के माध्यम से व्यक्त किया गया है—

"कई दिनों तक चूल्हा रोया, चुक्की रही उदास..."[7]

यहाँ चूल्हे का मानवीकरण अकालग्रस्त समाज की पीड़ा को मूर्त रूप देता है।

उनके संग्रह *"युगधारा"* की पंक्तियाँ—

"जमींदार है, साहूकार हैं, बनिया है व्यापारी है

अन्दर-अन्दर विकट कसाई, बाहर खदरधारी है।"[8]

शोषण की उस जटिल संरचना को उजागर करती हैं जिसमें आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक शक्तियाँ मिलकर ग्रामीण समाज का दोहन करती हैं। आलोचक नामवर सिंह ने इसे 'जनवादी यथार्थवाद' की संज्ञा दी है।[9]

(2) केदारनाथ अग्रवाल की कविताओं में श्रम

केदारनाथ अग्रवाल की कविताओं में श्रम की महत्ता प्रगतिशील चेतना का केंद्रीय तत्व है। उनकी काव्य-दृष्टि श्रम को मानवीय गरिमा और सृजनात्मक शक्ति का प्रतीक मानती है।

उनकी कविता *"ज़िंदगी को वह गढ़ेंगे"*में वे लिखते हैं—

"ज़िंदगी को वह गढ़ेंगे जो शिलाएँ तोड़ते हैं,

जो भगीरथ नीर की निर्भय शिराएँ मोड़ते हैं,

यज्ञ को इस शक्ति-श्रम के श्रेष्ठतम मैं मानता हूँ"।[10]

यहाँ श्रम को सामाजिक सृजन की आधारशिला के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

इसी प्रकार *"मजदूर का जन्म"*में श्रमिक जीवन की कठोरता का यथार्थ चित्रण मिलता है—

"आदमी का बेटा गर्मी की धूप में भाँजता है फावड़ा...

देह को तोड़ता है..."[11]

आलोचक रामविलास शर्मा ने अग्रवाल की कविता को "श्रम का सूरज" कहा है, जो सामूहिक श्रम-सौंदर्य को प्रतिष्ठित करती है।

(3) त्रिलोचन की कविताओं में ग्रामीण अर्थव्यवस्था

त्रिलोचन की कविताओं में ग्रामीण अर्थव्यवस्था का चित्रण अत्यंत यथार्थवादी है। उनकी कविता *"ऋण-शोधन"*में किसान परिवार की त्रासदी का मार्मिक चित्रण मिलता है—

"ऋण-शोधन के लिए दूध-घी बेच-बेच धन जोड़ेंगे,

बूंद-बूंद बेचेंगे, अपने लिए नहीं कुछ छोड़ेंगे।"[12]

इन पंक्तियों में किसान जीवन की आर्थिक विवशता और पारिवारिक त्याग का चित्रण है।

इसी प्रकार *"उठ किसान ओ"* और *"नगई महरा"* जैसी कविताओं में ग्रामीण समाज की विडंबनाएँ और संघर्ष स्पष्ट रूप से सामने आते हैं। आलोचक नामवर सिंह ने त्रिलोचन की काव्य-दृष्टि को लोक-चेतना से संपृक्त जनवादी काव्य कहा है।

(4) दुष्यंत कुमार की कविताओं में असमानता का व्यंग्य

दुष्यंत कुमार की कविताओं में सामाजिक-राजनीतिक व्यंग्य के माध्यम से आर्थिक असमानता का तीखा चित्रण मिलता है। उनकी प्रसिद्ध ग़ज़ल *"साये में धूप"* की पंक्तियाँ—

"कहाँ तो तय था चरागाँ हर एक घर के लिए,

कहाँ चराग मयस्सर नहीं शहर के लिए।"[13]

स्वतंत्र भारत के विकास मॉडल की विडंबना को उजागर करती हैं।

यहाँ 'चराग' प्रगति का प्रतीक है, जो सभी तक पहुँचने का वादा था, किंतु वास्तविकता में यह वादा अधूरा रह गया। उनकी कविता "हो गई है पीर पर्वत-सी पिघलनी चाहिए"14 इस असंतोष को सामूहिक प्रतिरोध में बदलने का आह्वान करती है।

4. आधुनिक हिन्दी कविता में आर्थिक चेतना

आधुनिक हिन्दी कविता में आर्थिक चेतना सामाजिक न्याय की अवधारणा से जुड़ी हुई है। यह केवल आर्थिक विषमता का चित्रण नहीं करती, बल्कि सत्ता, संस्कृति और सामाजिक संबंधों में व्याप्त असमानताओं की आलोचना भी करती है। नागार्जुन, त्रिलोचन और दुष्यंत कुमार जैसे कवियों की रचनाओं में भूख, बेरोज़गारी, किसान-पीड़ा और श्रमिक संघर्ष का चित्रण आर्थिक संरचना की आलोचना के रूप में सामने आता है।

इसी क्रम में समकालीन कवि राजेश जोशी और अरुण कमल की कविताएँ भी नव-उदारवादी अर्थव्यवस्था और उपभोक्तावादी संस्कृति की आलोचना करती हैं। इस प्रकार कविता सामाजिक चेतना को जाग्रत करने का माध्यम बन जाती है।

निष्कर्ष

आधुनिक हिन्दी कविता में आर्थिक चेतना एक महत्त्वपूर्ण साहित्यिक और सामाजिक विमर्श के रूप में उभरती है। यह कविता को केवल सौंदर्यात्मक अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं रहने देती, बल्कि उसे सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बनाती है।

मार्क्स और एंगेल्स के वर्ग-संघर्ष तथा अधिशेष मूल्य के सिद्धांत आधुनिक हिन्दी कविता में आर्थिक शोषण और प्रतिरोध की संरचना को समझने में अत्यंत उपयोगी सिद्ध होते हैं। दूसरी ओर, एडम स्मिथ के आर्थिक सिद्धांत आर्थिक संरचना की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को स्पष्ट करते हैं तथा मुक्त बाजार की सीमाओं को समझने का अवसर प्रदान करते हैं।

नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, त्रिलोचन और दुष्यंत कुमार जैसे कवियों की रचनाएँ यह सिद्ध करती हैं कि आधुनिक हिन्दी कविता समाज के आर्थिक यथार्थ से गहराई से जुड़ी हुई है। इन कविताओं में श्रम, वर्ग-संघर्ष, किसान-पीड़ा और आर्थिक असमानता के चित्रण के माध्यम से सामाजिक न्याय और समानता की आकांक्षा व्यक्त होती है।

इस प्रकार आधुनिक हिन्दी कविता आर्थिक अन्याय के विरुद्ध एक सशक्त वैचारिक हस्तक्षेप के रूप में सामने आती है। यह साहित्य को सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया का सक्रिय सहभागी बनाती है और समकालीन वैश्वीकरण तथा नव-उदारवादी आर्थिक व्यवस्था के संदर्भ में भी अपनी प्रासंगिकता बनाए रखती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

[1] रामविलास शर्मा, *हिन्दी साहित्य और सामाजिक चेतना*, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 1992, पृ. 89।

[2] Karl Marx and Friedrich Engels, *The Communist Manifesto*, London: Penguin Classics, 1848, p. 14–18.

[3] Karl Marx, *Capital: A Critique of Political Economy*, Vol. 1, Moscow: Progress Publishers, 1867, p. 301–320.

[4] Adam Smith, *An Inquiry into the Nature and Causes of the Wealth of Nations*, London: W. Strahan and T. Cadell, 1776, p. 13–20.

[5] नामवर सिंह, *कविता के नए प्रतिमान*, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 1968, पृ. 112–115।

[6] नागार्जुन, "खाली नहीं और खाली", *नागार्जुन रचनावली*, खंड–1, संपादक: शोभाकांत मिश्र, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2003, पृ. 214–215।

[7] नागार्जुन, "अकाल और उसके बाद", *नागार्जुन रचना संचयन*, संपादक: राजेश जोशी, नई दिल्ली: साहित्य अकादमी, 2017, पृ. 100–101।

[8] नागार्जुन, *युगधारा*, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 1953, पृ. 56।

[9] नामवर सिंह, *कविता के नए प्रतिमान*, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 1968, पृ. 118।

[10] केदारनाथ अग्रवाल, "ज़िंदगी को वह गढ़ेंगे", *श्रमजयी*, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2001, पृ. 32।

[11] केदारनाथ अग्रवाल, "मजदूर का जन्म", *केदारनाथ अग्रवाल: प्रतिनिधि कविताएँ*, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 1998, पृ. 87–88।

[12] त्रिलोचन, "ऋण-शोधन", *त्रिलोचन रचनावली*, खंड–1, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2004, पृ. 173।

[13] दुष्यंत कुमार, *साये में धूप*, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 1975, पृ. 36।

[14] दुष्यंत कुमार, "हो गई है पीर पर्वत-सी पिघलनी चाहिए", *साये में धूप*, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 1975, पृ. 52।

****